ब्रह्माण्ड : आधुनिक विज्ञान और जैन दर्शन

□ श्री बी० एल० कोठारी

(व्याख्याता—भूगोल, आर. एम. वी. सूरजपोल अन्दर, उदयपुर)

विगत चालीस वर्षों में अन्तरिक्ष विज्ञान में जो अन्वेषण-कार्य हुए हैं उनसे ब्रह्माण्ड की रचना, विस्तार एवं कार्यप्रणाली सम्बन्धी बहुत से नये रहस्य उद्घाटित हुए हैं। अतिस्पन्दनशील वर्णपट्टमापक, रेडियो, टेलिस्कोप आदि यन्त्रों की सहायता से तथा प्रायोगिक भौतिकी के निष्कर्षों व गणितीय सूत्रों द्वारा ब्रह्माण्ड सम्बन्धी नये तथ्य प्रकट हुए हैं जिनके आधार पर यह धारणा बना लेना अनुचित नहीं है कि अन्तरिक्ष सम्बन्धी पहेली का समाधान बहुत कुछ ढूँढ़ लिया गया है। लेकिन यदि कोई जिज्ञासु अन्तरिक्षविदों व भौतिक विज्ञान के निष्कर्षों का अध्ययन करे तो उसे निराशा ही हाथ लगेगी। ये निष्कर्ष इतने भिन्न-भिन्न एवं परस्पर विरोधी हैं कि इस से पहेली सुलझने के बजाय और उलझती प्रतीत होती है। यन्त्रों द्वारा अध्ययन के प्रति भी अविश्वास उत्पन्न होता है। विश्व क्या है? इसका प्रारम्भ कब हुआ? इसका विस्तार कितना है आदि प्रश्न आज भी उतने ही अनुत्तरित हैं जितने शताब्दियों पूर्व थे।

ज्योतिर्विदों के निष्कर्षों में परस्पर कितना वैषम्य है, यह कतिपय उदाहरणों से ज्ञात हो सकता है। जैसे हमारा सौरमण्डल प्रति सैकण्ड सात मील (प्रति घण्टा २५००० मील) की गति से स्थानीय नक्षत्र प्रणाली की परिक्रमा कर रहा है, यह माना जाता रहा है किन्तु अब यह माना जाता है कि परिक्रमण की यह गति प्रति सैकण्ड तेरह मील है। इसी तरह इस पुरानी मान्यता के विपरीत कि स्थानीय नक्षत्र प्रणाली भी प्रति सैकण्ड २०० मील की गति से आकाश-गंगा के अज्ञात केन्द्र की परिक्रमा कर रही है, सन् १९७४ में अमेरिकन ज्योतिर्विदों ने दावा किया है कि यह गति प्रति सैकण्ड ६०० मील (प्रति घण्टा बीस लाख मील) है। विश्व की उत्पत्ति व आयु के सम्बन्ध में भी वैज्ञानिक उपलब्धियों में पर्याप्त विषमता है। एक धारणा के अनुसार विश्व की उत्पत्ति ५० करोड़ वर्ष पूर्व हुई, दूसरी धारणा के अनुसार आज से १५ अरब वर्ष पूर्व हुई। इसी तरह विश्व अजन्मा व अविनाशी है अर्थात् अजर-अमर है, के विरुद्ध निश्चित समय पूर्व उत्पत्ति व निश्चित समय पर विनाश की मान्यता प्रचलित है। विश्व असीम है, विश्व ससीम है आदि वैषम्य प्रमुख वैज्ञानिकों व ज्योतिर्विदों में आज भी विवाद का विषय बने हुए हैं।

वैज्ञानिक प्रयोगों पर आधारित निष्कर्षों में विभिन्नता होनी नहीं चाहिये फिर भी ऐसा क्यों? जिन यन्त्रों द्वारा अन्तरिक्ष का निरीक्षण किया जाता है उनकी अपनी सीमाएँ हैं। आज का श्रेष्ठ से श्रेष्ठ दूरदर्शक यन्त्र भी ८ अरब प्रकाश वर्ष स्थित ज्योतिर्मालाओं से परे नहीं देख सकता। भविष्य में और अधिक उन्नत दूरदर्शक यन्त्रों की सहायता से अन्तरिक्ष के नये क्षेत्र दृष्यगम्य होंगे तब पुरानी मान्यताएँ बदलनी पड़ेंगी। यही हाल वर्णपट्टमापक यन्त्रों का है। इनकी संवेदनशीलता में वृद्धि किये जाने पर अवश्य ही अन्तरिक्ष के नये तथ्य प्रकट होंगे। अधिकांश भौतिक प्रयोग और उनके निष्कर्ष हमारे धरातल व वायुमण्डल में सम्पादित होते हैं जो इनकी परिस्थितियों व कार्यप्रणालियों पर निर्भर हैं जबकि यह स्पष्ट हो चुका है कि दूरस्थ ज्योतिर्माला प्रदेशों की परिस्थितियाँ व कार्यप्रणालियाँ हमारे धरातल से भिन्न प्रकार की हैं; वहाँ की रचना, घनत्व, गतियाँ व पदार्थ भिन्न प्रकार के हैं। ऐसी स्थिति में यहाँ के भौतिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नियम अन्तरिक्ष में लागू कर कोई नियम या सूत्र प्राप्त करना सारहीन है। वास्तविकता यह है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड इतना प्राचीन व विस्तृत है कि वह किसी मापे जा सकने वाले यन्त्रों की परिधि में नहीं आता।

अन्तरिक्ष निरीक्षण के यन्त्र आधुनिक विज्ञान की देन हैं। ऐतिहासिक व पूर्व ऐतिहासिक काल में ऐसे यन्त्रों का अभाव था। सम्भवतः साधारण यन्त्र भी नहीं थे फिर भी उस युग में भारतीय मनीषियों के अन्तरिक्ष के सूक्ष्म रहस्यों का अनावरण किया। नंगी आँखों से ही उन्होंने आज के श्रेष्ठ यन्त्रों की पकड़ में न आने वाले अन्तरिक्ष स्थित पिण्डों के आकार, गतियाँ, दूरियाँ, रूप, रंग आदि का इतना सही विवरण प्रस्तुत किया कि वे चुनौती से परे हैं। विश्व की उत्पत्ति व विस्तार के बारे में उनका चिन्तन इतना तर्कसंगत व स्पष्ट है कि विज्ञान के विवादास्पद सिद्धान्त हास्यास्पद लगते हैं। यन्त्रों के अभाव में शताब्दियों पूर्व अन्तरिक्ष का गहन अध्ययन किस प्रकार सम्भव हुआ? क्या यह सम्भव नहीं कि उस युग में ऋषि-मुनियों की अतीन्द्रिय शक्तियों के माध्यम से अदृश्य-लोक का अनावरण हुआ होगा?

ब्रह्माण्ड रचना, उत्पत्ति एवं विस्तार का जैन साहित्य में विस्तार से उल्लेख मिलता है। ब्रह्माण्ड का आकार, क्षेत्रफल, उत्पत्ति, आयु, विस्तार व ज्योतिर्पिण्डों की गतियाँ, उनके मार्ग आदि मानचित्रों के साथ उपलब्ध हैं। जैन साहित्य स्थित ब्रह्माण्ड विज्ञान का अवलोकन करें और इसका मूल्यांकन करें इसके पूर्व ब्रह्माण्ड सम्बन्धी आधुनिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय आवश्यक है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, आयु, रचना व विस्तार के बारे में भिन्न-भिन्न वैज्ञानिक मत है। उत्पत्ति व आयु सम्बन्धी दो विपरीत विचारधारा निम्न प्रकार हैं—

(१) ब्रह्माण्ड का आरम्भ निश्चित है—अर्थात् अतीतकाल में किसी एक समय में सकल ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आया एवं भविष्य में किसी एक दिन इसका अन्त हो जायगा।

(२) ब्रह्माण्ड अनादि व अनन्त है। अतीतकाल में न तो कभी इसकी उत्पत्ति हुई न कभी अन्त ही होगा। यह शाश्वत अजर-अमर है।

(i) ब्रह्माण्ड का निश्चित आरम्भ मानने वाले ज्योतिर्विदों में माउण्ट विलसन वेधशाला के डा० एडविन हबल का मत है कि आज से करीब दो सौ करोड़ वर्ष पूर्व वर्तमान ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आया। तब सभी ज्योतिर्पिण्ड घनीभूतरूप में एक ही स्थान पर एक पिण्ड के रूप में विद्यमान थे। उस पिण्ड में एक महाविस्फोट हुआ है और पिण्ड स्थित समस्त पदार्थ चारों ओर छितराने लगा। छितराने की वह क्रिया आज भी जारी है। पदार्थ ज्योतिर्मालाओं (आकाश-गंगाओं) के रूप में अत्यन्त तीव्र गति से आज भी शून्य में बिखरता जा रहा है। वाशिंगटन विश्वविद्यालय के ज्योतिर्विद डा० जार्जगेमो का मत है कि आज से करीब ५० करोड़ वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड का केन्द्रीय स्थल समजातीय व मौलिक वाष्प का कल्पनातीत ताप का भण्डार था। उसका तापमान कम होने से धीरे-धीरे ठोस पदार्थों का निर्माण हुआ तथा ग्रह-नक्षत्र आकाश-गंगाएँ अस्तित्व में आईं। बेल्जियम के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक एबोलिमेत्र द्वारा प्रस्तावित सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक विशाल मौलिक अणु से हुई। इस अणु में विस्फोट होने से पदार्थ बिखर कर फैलने लगा एवं आज भी फैल रहा है। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक प्रो० मार्टिन रीले का मत भी लगभग इसी प्रकार है।

विश्व की उत्पत्ति का निश्चित प्रारम्भ बताने में कुछ भौतिक सिद्धान्त भी सहायक हैं। यूरेनियम धातु से निरन्तर प्रकाश किरणों का विकीरण होता रहता है, यह सभी को ज्ञात है। इस धातु का अध्ययन करने से पता चला कि यह आज से करीब २० अरब वर्ष पूर्व अस्तित्व में आई। नक्षत्रों के आन्तरिक भागों में स्थित तापप्रणालियाँ जिस तीव्रता से पदार्थ को प्रकाश में परिणत करती है उससे अनुमान लगाया गया है कि अधिकांश तारों की आयु २० अरब प्रकाश वर्ष है। तीव्र गति से विचरण करने वाली आकाश-गंगाओं के आधार पर भी इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया है कि ब्रह्माण्ड का प्रारम्भ लगभग बीस अरब वर्ष पूर्व हुआ होगा।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति व आयु के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों ने जो भी सिद्धान्त प्रस्तुत किये हैं उनमें हर सिद्धान्त यह स्वीकार करता है कि वर्तमान ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आने के पूर्व कोई पदार्थ पहले से ही विद्यमान था—चाहे वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशाल अणु हो, घनीभूत पदार्थ समूह हो या उन्मुक्त न्यूट्रोन हो। यह भी सम्भव है कि वह पदार्थ शक्ति या किसी अन्य रूप में हो। वह पदार्थ क्या था जिससे विशाल अणु अस्तित्व में आया, जिसमें विस्फोट होने से वर्तमान ब्रह्माण्ड की रचना हुई, तथा विशाल अणु का निर्माण करने वाले पदार्थ का भी उससे पूर्व कोई रूप रहा होगा। वह रूप क्या था एवं कब अस्तित्व में आया? इन प्रश्नों पर सभी वैज्ञानिक मौन हैं। ब्रह्माण्ड-रचना के आदितत्त्व पर विचार करते-करते अतीत की गहराइयों में प्रविष्ट होते जाते हैं व किसी किनारे पर नहीं पहुँच पाते। अतः विश्व-उत्पत्ति की वर्तमान धारणाएँ अत्यन्त संकुचित रह जाती हैं।

विश्व-उत्पत्ति उपरोक्त सम्बन्धी धारणाओं की यह भी मान्यता है कि विश्व का एक दिन अवश्य ही अन्त होगा क्योंकि जिस वस्तु की उत्पत्ति निश्चित है उसका अन्त भी निश्चित है। लेकिन यह अन्त कब व कैसे होगा तथा ब्रह्माण्ड स्थित समस्त पदार्थ क्या अस्तित्वहीन हो जायगा इस विषय पर भी प्रायः वैज्ञानिक मौन हैं। सिर्फ ताप-गति-विज्ञान के द्वितीय नियम के आधार पर 'ब्रह्माण्ड की एक दिन निश्चित समाप्ति' का विवरण मिलता है। ताप-गति-विज्ञान का द्वितीय नियम यह प्रतिपादित करता है कि विश्व के समस्त पदार्थ एक ही दिशा में—विनाश की ओर गति कर रहे हैं। सूर्य का ताप धीरे-धीरे घट रहा है। तारे बुझने वाले अँगारे बन रहे हैं। पदार्थ ताप एवं प्रकाश में बदलता जा रहा है और शक्ति (ताप या प्रकाश) शून्य में विलीन हो रही है। ताप-गति-विज्ञान का यह नियम अचल एवं सन्देह से परे है। हम देखते हैं कि ताप सदा उच्च अंश से निम्न अंश की ओर प्रवाहित होता है—इस दृष्टि से अधिक तापयुक्त पदार्थ निम्न तापयुक्त पदार्थ को उष्मा प्रदान करते हैं। इस प्रक्रिया से एक दिन ऐसा आ सकता है कि विश्व-स्थित समस्त पदार्थों का तापमान एक समान हो जायगा। तब ताप का प्रवाह रुक जायगा क्योंकि विश्व के पदार्थों में तापान्तर होगा ही नहीं। विश्व में सर्वत्र समान उर्जा, समान प्रकाश व समान शक्ति का वितरण होगा। ऐसा होने पर विश्व की सभी गतियाँ व व्यवस्थाएँ रुक जायंगी, विश्व गतिहीन-निर्जीव हो जायेगा—एक प्रकार से विश्व का अन्त हो जायगा।

विश्व-स्थित सभी पदार्थों का तापमान एक समान होने से विश्व गतिहीन हो जायगा क्या यह मान्यता युक्तिसंगत है? ताप के क्षय का यह नियम हमारी पृथ्वी के वर्तमान पर्यावरण में लागू होता है, ब्रह्माण्ड के अन्य क्षेत्रों में भी यह नियम इसी रूप में लागू हो यह आवश्यक नहीं; क्योंकि वहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियाँ भिन्न हो सकती हैं। प्रकृति के सन्तुलन नियम के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि ब्रह्माण्ड के एक भाग में पदार्थ शक्ति में बदलकर शून्य में बिखर रहा है तो कहीं दूसरे भाग में पुनः एकत्रित होकर पदार्थ में बदल रहा हो। "पदार्थ व शक्ति की सुरक्षा का नियम" यह बताता है कि पदार्थ, शक्ति में व शक्ति पुनः पदार्थ में परिवर्तित की जा सकती है। पदार्थ व शक्ति दो भिन्न वस्तु नहीं है। प्रयोगशाला में ताप को पुनः पदार्थ में बदलना सम्भव हुआ है। अवश्य ही ब्रह्माण्ड के किसी कौने में भिन्न परिस्थितियों में ताप या शक्ति से नवीन पदार्थ की रचना सम्भव है। पदार्थ अविनाशी है तो विश्व भी अविनाशी है यह मानना अधिक युक्तियुक्त है।

विश्व की निश्चित आदि व अन्त के सिद्धान्तों के विपरीत विश्व अनादि व अनन्त है—भूतकाल में ऐसा कोई समय नहीं था जब विश्व नहीं था, भविष्य में ऐसा कोई समय नहीं आयेगा जब विश्व का अस्तित्व मिट जायगा, यह मानने वालों में केलिफोर्निया इन्स्टीट्यूट के डा० टालमेन का कथन है कि विश्व की रचना परवलीय है। वर्तमान में इसका विस्तार हो रहा है जो असंख्य वर्षों तक होता रहेगा। फिर इसका एक बार संकुचन होगा। इसमें भी असंख्य वर्ष लग जायेंगे। अन्य वैज्ञानिकों के अनुसार वर्तमान विश्व विस्तार व संकुचन अथवा पदार्थ के रूप परिवर्तन के अनन्त-अनन्त दौर से गुजरा है व गुजरता रहेगा। पदार्थ शक्ति में व शक्ति पदार्थ में बदलती रहेगी—विश्व सदा अविनाशी बना रहेगा। इसी सन्दर्भ में डा० फ्रेड व्हिप्ले की मान्यता है कि वर्तमान में अन्तःनक्षत्रीय क्षेत्र में विचरण कर रहा समस्त सूक्ष्म-अदृश्य पदार्थ पन्द्रह अरब वर्षों में जमकर तारे बन जायेंगे।

अजर-अमर विस्तारमान् विश्व के प्रबल समर्थक डा० फ्रेड होयल की स्थायी अवस्था का विश्व सिद्धान्त प्रसिद्ध एवं बहुचर्चित है। उनका कथन है कि विश्व का सतत विस्तार हो रहा है। आज से २० अरब वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के सभी ज्योतिर्पिण्ड एक केन्द्र में स्थित थे। एक विस्फोट के साथ ये सभी ज्योतिर्पिण्ड केन्द्र के चारों ओर छितराने लगे एवं आज भी अत्यन्त तीव्र गति से छितराते जा रहे हैं। इनके छितराने से जो स्थान रिक्त होता है वहाँ सतत नये द्रव्य का निर्माण होता रहता है और अन्तरिक्ष में पदार्थ का घनत्व सदा एक समान बना रहता है। नित नये द्रव्य के निर्माण से ज्योतिर्पिण्डों का जन्म तथा उनका अनन्त शून्य में निरन्तर विस्तृत होने की घटनाएँ अनन्त काल तक चलती रहेंगी। अतः विश्व उम्र की परिधि के बाहर है। डा० फ्रेड होयल के सिद्धान्त की प्रमुख बात यह है कि "निरन्तर नये द्रव्य का निर्माण" हो रहा है जिससे विस्तारमान विश्व में रिक्तता नहीं आती। लेकिन नये द्रव्य के निर्माण की कल्पना सारहीन है। भौतिकशास्त्र का कोई सिद्धान्त शून्य में से नये पदार्थ का निर्माण स्वीकार नहीं करता। पदार्थ अविनाशी है। न तो इसका निर्माण होता है और न विनाश ही। ब्रह्माण्ड के आरम्भ में जितना पदार्थ रहा होगा उतना आज भी है और भविष्य में भी उतना ही रहेगा। असत् से सत् के निर्माण की कल्पना ही हास्यास्पद है। इस सिद्धान्त को प्रबल विरोध का सामना करना पड़ा फिर भी "अरबों वर्ष पहले जैसा ब्रह्माण्ड था वैसा आज भी है," मान्यता इसे महत्त्व प्रदान करती है।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति व आयु के सम्बन्ध में ज्योतिर्विदों की मान्यताएँ कितनी विषम हैं, यह स्पष्ट है। अब हम विचार करेंगे कि विश्व स्थिर व सीमाबद्ध है या विस्तारवान् एवं सीमाहीन। इस बारे में भी वैज्ञानिक मतैक्य नहीं है। अधिकांश ज्योतिर्विद ब्रह्माण्ड को अस्थिर व विस्तारमान् बताते हैं। हब्बल, डा० जार्जगेमो, मार्टिन रीले, फ्रेड होयल आदि के अनुसार अन्तरिक्ष स्थित समस्त पदार्थ गतिशील हैं। विश्व का निरन्तर विस्तार हो रहा है, समस्त ज्योतिर्पिण्ड एक दूसरे से अत्यन्त तीव्र वेग से दूर हटते जा रहे हैं। हम से दस लाख प्रकाशवर्ष तक दूरस्थ आकाशगंगाओं के दूर हटने की गति प्रति सैकण्ड १०० मील है जबकि २५ करोड़ प्रकाशवर्ष दूर की आकाश-गंगाओं के दूर हटने की गति प्रति सैकण्ड २५००० मील (प्रकाश के वेग का सातवाँ अंश) है। इस प्रकार विश्व असीम व खुला है। विश्व के प्रमुख वैज्ञानिक नोबेल पुरस्कार विजेता डा० आइंस्टीन का मत है कि ब्रह्माण्ड निरन्तर विस्तारमान है लेकिन इसकी एक सीमा है। एक सीमा के भीतर ही विस्तार सम्भव है। उनके अनुसार विश्व सीमाबद्ध है, अनन्त व सीमाहीन नहीं। डा० आइन्स्टीन द्वारा ब्रह्माण्ड को सीमित व निश्चित आकार (अण्डाकार) मानने का कारण गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र है। ब्रह्माण्ड स्थित असंख्य ज्योतिर्पिण्ड अपने-अपने गुरुत्वाकर्षण क्षेत्रों की परस्पर समबद्ध ज्यामितिक आकार में गठित है। प्रत्येक पिण्ड अपने स्थान पर अडिग है तथा दूसरे पिण्ड से निश्चित दूरी पर, निश्चित मार्ग पर भ्रमण-परिक्रमण करता है। ये ज्योतिर्पिण्ड न कभी निकट आते हैं, न दूर हटते हैं। अपनी सुनिश्चित स्थिति बनाये रखने का कारण परस्पर गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव है। विश्व का प्रत्येक पदार्थ गुरुत्वाकर्षण से प्रभावित है यहाँ तक कि प्रकाश-किरण भी। जैसा माना जाता है—प्रकाश सदा सीधी रेखा में चलता है, वास्तव में गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में सीधा नहीं चलता। अन्य पिण्डों के वक्राकार मार्ग की भाँति इसमें भी वक्रता आ जाती है। चूंकि किसी गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र की बनावट गुरुत्वाकर्षण वाली वस्तु की राशि व वेग से निर्धारित होती है अतः यह निष्कर्ष निकाला गया कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की बनावट उसके अन्दर समस्त पदार्थों के योग के प्रभाव से सीमित होगी। विश्व की असंख्य पदार्थीय मात्राओं द्वारा उत्पन्न वक्रता सीमित व निश्चित आकार वाले ब्रह्माण्ड की धारणा पुष्ट करती है। डा० आइंस्टीन ने असीम व खुले विश्व की मान्यता को स्वीकार नहीं किया क्योंकि यदि असीम ब्रह्माण्ड में अनन्त पदार्थ होता तो सम्पूर्ण गुरुत्वाकर्षण शक्ति भी अनन्त होती जिससे अनन्त प्रकाश व ताप उत्पन्न होता और ब्रह्माण्ड स्वयं जलकर भस्म हो जाता।

विश्व के सतत विस्तार और शून्य में विलीन होने की मान्यता का आधार वर्णपट्टमापक यन्त्र है। जो प्रकाश की लालरेखा का विचलन बताता है जिसे 'डोपलर का प्रभाव' कहा गया है। वर्णपट्टमापक यन्त्र पर सुदूर स्थित आकाश-गंगाओं का जो प्रकाश उभरता है उसमें लाल रेखा विचलित होकर अधिक लाल होती हुई प्रतीत होती है। किसी प्रकाश का आधार ज्योतिर्पिण्ड यदि दूर हटता हो तो प्रकाश अधिकाधिक लाल होता हुआ प्रतीत होता है इसके विपरीत प्रकाश का आधार यदि निकट आ रहा हो तो प्रकाश नीला होता हुआ प्रतीत होता है। प्रकाश के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस व्यवहार से यह निष्कर्ष खोजा गया कि आकाश-गंगाएँ हम से निरन्तर दूर हटती जा रही हैं वरना इसे किसी अन्य प्रक्रिया या घटना से नहीं समझा जा सकता। विश्व के निरन्तर शून्य में विस्तृत होने में इस प्रमाण के अलावा अन्य कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है—केवल इसी सिद्धान्त पर सारा ढाँचा खड़ा है। प्रकाश की लाल रेखा में परिवर्तन के अन्य कारण सम्भव है। सर जेम्सजीन्स के अनुसार वातावरण के दबाव के कारण भी लालरेखा में विचलन सम्भव है। सुदूर तारे से आने वाला प्रकाश अपने लम्बे मार्ग में शक्ति का व्यय करता जाता है जिससे भी लालरेखा में विचलन होना सम्भव है। केलिफोर्निया इन्स्टीट्यूट के ज्योतिर्विद डा० जिवकी का विचार है कि जब प्रकाश किसी अन्य बड़े तारे के निकट से या किसी निहारिका से गुजरता है तो उसकी राशि एवं ऊर्जा कम हो जाती है जिससे प्रकाश का आवर्त्तन बढ़ जाता है एवं लालरेखा में तीव्रता आ जाती है। अतः "डोपलर के प्रभाव" के आधार पर ज्योतिर्पिण्डों के निरन्तर दूर हटने की मान्यता संदिग्ध है। ज्योतिर्पिण्डों का अन्तराल मापने के जितने साधन वर्तमान में प्रचलित हैं वे भी इस विषय पर प्रकाश नहीं डालते। पृथ्वी से निरन्तर दूर हटने वाले तारों की दूरियों में समय-समय पर अन्तर प्रकट होना चाहिये पर वैसा नहीं होता। जैसे पृथ्वी का निकटस्थ तारा प्रोक्सिमा सेंटोरी है जो पचास वर्ष पूर्व पृथिवी से ४.३ प्रकाश वर्ष दूर था। आज भी उसकी दूरी मापने पर ४.३ प्रकाशवर्ष ही आती है। विस्तारमान् विश्व सिद्धान्त के अनुसार सभी ज्योतिर्पिण्ड विस्फोट केन्द्र के चारों ओर विभिन्न दशाओं में छितरा रहे हैं ऐसी स्थिति में पृथ्वी से उनकी दूरियों में अन्तर प्रकट होना चाहिये भले ही वे कितने ही दूर क्यों न हों। पर पिछले दो हजार वर्षों में नाम मात्र भी अन्तर प्रकट नहीं हुआ। ब्रह्माण्ड स्थिर व असीम है या गतिशील व असीम यह निर्णय कर पाना आज भी असम्भव-सा है।

ब्रह्माण्ड और जैनदर्शन

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, आयु, आकार व सीमा के सम्बन्ध में आधुनिक वैज्ञानिकों के विचारों में कितनी विषमता है, यह स्पष्ट है। अब हम जैनदर्शन में ब्रह्माण्ड-सम्बन्धी विचारों की व्याख्या करेंगे। जैन मतानुसार—

(१) विश्व (ब्रह्माण्ड) अजन्मा, अनादि व शाश्वत है। भूतकाल में ऐसा कोई समय नहीं था जब ब्रह्माण्ड नहीं था, भविष्य में ऐसा कोई समय नहीं होगा जब ब्रह्माण्ड नहीं होगा। अर्थात् ब्रह्माण्ड का अस्तित्व अनादिकाल से है एवं अनन्त काल तक रहेगा। इस मान्यता का आधार पदार्थ की अविनाशता है। यह सर्वसम्मत तथ्य है कि पदार्थ न तो कभी नष्ट होता है, न कभी निर्मित ही। समस्त ब्रह्माण्ड में जितना पदार्थ भूतकाल में था उतना आज भी है व भविष्य में भी रहेगा। पदार्थ की मात्रा में अणुमात्र की घट-बढ़ कभी सम्भव नहीं। यदि पदार्थ की मात्रा स्थिर है और इसका अस्तित्व अनादि काल से है तो ब्रह्माण्ड भी अनादि काल से है, यह निष्कर्ष युक्तियुक्त होगा। यह कल्पना अशक्य होगी कि भूतकाल में कभी शून्य में से यकायक ब्रह्माण्डीय पदार्थ उत्पन्न हो गया। पदार्थ शून्य में से प्रकट नहीं हो सकता। इसी प्रकार पदार्थ शून्य में विलीन भी नहीं हो सकता। इसमें ब्रह्माण्ड की अनन्तता सिद्ध होती है। पौराणिक व आधुनिक वैज्ञानिक मत जो ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक विशाल अणु में विस्फोट से मानते हैं वे भी इस तथाकथित उत्पत्ति के पूर्व विशाल अणु का अस्तित्व स्वीकार करते हैं। इस विशाल अणु का पूर्व रूप क्या रहा होगा? इसके पूर्व रूप के भी पहले कोई अन्य रूप रहा होगा—इस पूर्वापरता पर विचार करते हुए पीछे हटते जायें तो कहीं विनाश नहीं मिलेगा और अन्त में पदार्थ का अनादि अस्तित्व स्वीकार करना ही पड़ेगा। ब्रह्माण्ड-उत्पत्ति के जितने भी सिद्धान्त हैं वे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति नहीं दर्शाते बल्कि ब्रह्माण्ड स्थित पदार्थ का रूप परिवर्तन समझाते हैं। पदार्थ नष्ट नहीं होकर नवीन रूप धारण करता है जैसे एक लकड़ी को जलाया जाय तो लकड़ी का कार्बन वायुमण्डलीय आक्सीजन में मिलकर कार्बनडाई आक्साइड बन जायगा एवं कुछ भाग राख बन जायगा। लकड़ी में जितना पदार्थ जलने के पूर्व था उतना जलने के पश्चात् भी है, पर अन्य रूप में। पदार्थ का रूप परिवर्तन एक प्राकृतिक घटना है। कोई भी पदार्थ गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव, ताप, दाब एवं मौसम के प्रभाव से अपना स्वरूप स्थिर नहीं रख सकता। उसमें ह्रास या विकास होगा। आज अन्तरिक्ष में हम जिन नक्षत्रों-तारों आदि को देखते हैं वे अरबों वर्ष पूर्व अणुओं, न्यूट्रोनों या अन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किसी रूप में रहे होंगे। उनके घनीभूत होने से वर्तमान रूप में अस्तित्व आये और अब निरन्तर ताप-क्षय करते हुए पुनः नया रूप धारण कर लेंगे। तत्पश्चात् फिर यह ताप घनीभूत होकर नये पदार्थों का रूप धारण कर लेगा। यह परिवर्तन चक्र चलता ही रहेगा। जैन सिद्धान्त सृष्टि के इस परिवर्तन चक्र को स्वीकार करता है। यह सिद्धान्त तर्कसंगत व बोधगम्य है। वर्तमान युग के कुछ वैज्ञानिक "विश्व के चक्रीय सिद्धान्त" के समर्थक हैं जो जैन मान्यता के अत्यधिक निकट है।

(२) ब्रह्माण्ड के आकार व विस्तार की दृष्टि से जैन दर्शन की मान्यता है कि ब्रह्माण्ड निश्चित आकार का है तथा ससीम है। ब्रह्माण्ड के आकार की निश्चितता व सीमाबद्धता परस्पर सम्बन्धित है। ब्रह्माण्ड अनिश्चित व असीम नहीं है। अन्तरिक्ष स्थित समस्त पदार्थ—एक सीमा में बद्ध है, इस सीमित प्रदेश को "लोक" कहा गया है। इस सीमाबद्ध प्रदेश के बहार कोई पदार्थ नहीं केवल शून्याकाश है जिसे "अलोक" कहा गया है। लोक की आकृति अँग्रेजी की 8 की संख्या से लगभग मिलती-जुलती है जिसमें एक शून्य दूसरे शून्य से ऊपर की ओर संयुक्त होता है। इस मान्यता के अनुसार "लोक" अर्थात् ब्रह्माण्ड के तीन खण्ड हैं—अधोलोक (नीचे के शून्य का गोलाकार स्वरूप), ऊर्ध्व लोक (ऊपर के शून्य का गोलाकार स्वरूप) एवं मध्य लोक (दोनों शून्यों का संगमस्थल)। तीनों लोकों में स्थित पदार्थों के गुण-धर्मों में न्यूनाधिक अन्तर के कारण भिन्न-भिन्न प्राकृतिक परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं जिनकी क्रिया-प्रतिक्रिया से सृष्टि परिवर्तन चक्र चलता रहता है।

ब्रह्माण्डीय आकृति व विस्तार की जैन मान्यता डा० आइन्सटीन की मान्यता के अतिनिकट है। उनकी भी मान्यता है कि ब्रह्माण्ड निश्चित आकृति का व सीमाबद्ध है। जैसा पहले कहा है—डा० आइन्सटीन की ससीम (सीमाबद्ध) विश्व की मान्यता का आधार गुरुत्वाकर्षण है। ब्रह्माण्ड स्थित समस्त पदार्थों का संयुक्त गुरुत्वाकर्षण इसे वक्राकार रूप पदार्थ करता है एवं सीमाबद्ध कर देता है। यदि पदार्थ अनन्त होता हो अनन्त गुरुत्वाकर्षण भी होता जो विश्व को भस्मीभूत कर देता। अत: पदार्थ सीमित है जो ब्रह्माण्ड विस्तार को भी सीमित करता है। जैन दर्शन ब्रह्माण्ड को सीमित बनाने में गुरुत्वाकर्षण की तरह ही, लेकिन इससे अधिक सूक्ष्म दो तत्त्वों को प्रभावी मानता है, ये दो तत्त्व हैं—(१) धर्मास्तिकाय एवं (२) अधर्मास्तिकाय। ये दो तत्त्व ब्रह्माण्ड की आकृति को निश्चित ही नहीं करते, ब्रह्माण्ड स्थित समस्त पदार्थों की गतिशीलता, स्थिरता, रूप परिवर्तन तथा ब्रह्माण्ड के विस्तार व संकुचन के लिए उत्तरदायी हैं।

धर्मास्तिकाय व अधर्मास्तिकाय क्या हैं ? यह जान लेना आवश्यक है। धर्मास्तिकाय का कार्य-व्यापार है पदार्थ के धर्म को बनाये रखना अर्थात् उसमें निहित रूप, रंग, तन्मात्रा आदि को बनाये रखना। अधर्मास्तिकाय का कार्य-व्यापार है—पदार्थ के धर्म (गुणों) का विनाश करना—उसके रूप, रंग, तन्मात्रा का ह्रास करना। हम प्रकृति के इस नियम से परिचित हैं कि प्रत्येक पदार्थ अपना अस्तित्व बनाये रखता है लेकिन धीरे-धीरे उसमें ह्रास भी आता है। अस्तित्व बनाये रखने का गुण "संयोजन" है; ह्रास द्वारा पदार्थ का रूप परिवर्तन "गुण" वियोजन है। ब्राह्माण्ड स्थित समस्त पदार्थ परिवर्तन की निरन्तर प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। जैसे रेडियम परिवर्तन क्रम में २० अरब वर्ष में सीसा बन जाता है। आज जो हमारा सूर्य है वह निरन्तर ताप क्षय करता हुआ एक दिन बुझ जायगा। यह ताप पुनः संगठित होकर नया पदार्थ बना देगा। स्वर्ण जिसे हम आज देखते हैं अतीतकाल में इसका रूप भिन्न रहा होगा, यह भी परिवर्तन क्रिया में अपने तत्त्व बिखेरता हुआ विघटित होकर वर्तमान रूप में आया होगा तथा भविष्य में भिन्न स्वरूप को प्राप्त होगा। धर्मास्तिकाय व ब्रह्माण्डीय-पदार्थों की गतिशीलता में व अधर्मास्तिकाय स्थिरता बनाये रखने में भी सहायक तत्त्व हैं। सम्पूर्ण जगत् के पदार्थ गतिशील हैं—परिभ्रमण या परिक्रमण करते हैं—इनकी गतिशीलता धर्मास्तिकाय के कारण सम्भव है। समस्त पदार्थ गतिशील होते हुए भी अपनी स्थिरता—निश्चित मार्ग, निश्चित, अन्तराल बनाए रखते हैं यह अधर्मास्तिकाय के कारण है।

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय विपरीतधर्मी तत्त्व हैं, यह माना जा सकता है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी गति सहायक तत्त्व के रूप में "ईथर" की कल्पना की थी लेकिन प्रयोग द्वारा इसका अस्तित्व सिद्ध न हो सकने से इसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्याग दिया। धर्मास्तिकाय "ईथर" जैसा तत्त्व ही है। ये दोनों पदार्थ अभौतिक व अमूर्त हैं जिन्हें प्रयोगों की कसोटी पर कसना सम्भव नहीं है। धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय ब्रह्माण्ड स्थित समस्त पदार्थों के सम्मिलित प्रभाव से उत्पन्न ऐसे गुण हैं जो ब्रह्माण्ड को वक्रता प्रदान कर सीमित कर देते हैं। ब्रह्माण्ड के बाहर ये दोनों पदार्थ नहीं अतः पदार्थों की गति भी सम्भव नहीं। डा० आइन्सटीन के अनुसार ब्रह्माण्ड को सीमित आकार का रूप देने में जो कार्य गुरुत्वाकर्षण का है, जैन मान्यता में धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय का है।

प्रत्येक पदार्थ स्थिर प्रतीत होते हुए भी अस्थिर है। अन्तरिक्ष स्थित पिण्ड गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में गतिशील है। तो प्रत्येक पदार्थ में निहित अणु-परमाणु विद्युत-चुम्बकीय प्रभाव में भी गतिशील है। प्रत्येक स्थिर वस्तु के अणु-परमाणुओं की गति प्रकाशवेग के समकक्ष है। स्थिरता व गतिशीलता को कौन नियन्त्रित करता है। डा० आइन्सटीन के अनुसार गुरुत्वाकर्षण व विद्युतचुम्बकीय प्रभाव नियन्ता है लेकिन जैनमतानुसार धर्मास्तिकाय व अधर्मास्तिकाय नियन्ता हैं। गुरुत्वाकर्षण व विद्युत-चुम्बकीय प्रभाव स्वयं बहुत स्थूल है जो स्वयं धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय से नियन्त्रित होते हैं। सृष्टि परिवर्तन-चक्र में पदार्थों का जो रूप परिवर्तन होता है—पदार्थों के विकास व ह्रास भी इन दो तत्त्वों से प्रभावित है। वायुमण्डलीय परिस्थितयाँ—ताप, दाब, वर्षा आदि पदार्थ परिवर्तन को प्रभावित करती हैं, स्वयं इन दो तत्त्वों की उपज है।

जैन मान्यतानुसार ब्रह्माण्ड अनादि व अनन्त है तथा सीमित आकृति का है, ब्रह्माण्ड का निरन्तर रूप बदलता रहता है—ब्रह्माण्डीय पदार्थ का अस्तित्व ज्यों का त्यों बना रहता है लेकिन स्वरूप नये-नये आकारों में प्रकट होता है। धर्मास्तिकाय व अधर्मास्तिकाय की क्रिया-प्रतिक्रिया इस परिवर्तन चक्र के तथा ब्रह्माण्ड की सीमितता के कारक हैं। ब्रह्माण्ड सम्बन्धी जैन मान्यता अत्यन्त प्राचीन है जिसका आधार यन्त्र नहीं होकर दिव्य चक्षु ही हो सकते हैं। इस मान्यता को चुनौती देना अब तक सम्भव नहीं हो सका है। आज के वैज्ञानिक ज्यों-ज्यों ब्रह्माण्ड ज्ञान में वृद्धि कर रहे हैं त्यों-त्यों वे इस धार्मिक मान्यताओं के निकट आ रहे हैं। प्रमुख ब्रिटिश ज्योतिर्विद डा० जस्टो कहते हैं—ब्रह्माण्ड ज्ञान एक अत्यन्त ऊँचे पर्वत की चोटी की तरह है जिस पर चढ़ना दुष्कर है। विज्ञानवेत्ता इस चोटी पर पहुँचने के लिये चढ़ते गये—चढ़ते गये और अन्त में जब वे चोटी के निकट पहुँचे तो देखा कि धर्म गुरु वहाँ पहले से ही आसन जमाये बैठे हैं। तात्पर्य यह कि ब्रह्माण्ड का वास्तविक ज्ञान धर्मगुरुओं ने पहले ही कर लिया है। ब्रह्माण्ड सम्बन्धी जैनमान्यता पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है और यह निश्चित है कि एक दिन विज्ञानवेत्ता अन्तिम सत्य के रूप में इसके ही निकट पहुँचेंगे।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org